बाबा साहब डॉ० अम्बेडकर की दलितों में सामाजिक तथा राजनीतिक जागरण

डॉ० अजय यशराज*

बाबा साहेब डॉ॰ अम्बेडकर सामाजिक नवजागरण के अग्रदूत थे। उनका सम्पूर्ण जीवन सदियों से शोषित, दलित मानवता के सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक उत्थान के लिए समर्पित था। उन्होंने समाज में विद्यमान रूढिगत मान्यताओं और विषमताओं को समूल नष्ट करने और सामाजिक न्याय और दलितों के अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए जीवनपर्यन्त संघर्ष किया। उन्होंने अपनी रचनाओं में दलित जागृति की व्याख्या की उनकी रचनाओं के आधार पर हम पाते हैं कि 20वीं शताब्दी के आरंभिक वर्षो में दलित जागरण ठोस शक्ल लेने लगा था इस बात की पुष्टि 1912 में प्रकाशित 'द डिप्रेस्ड क्लासेज' से होती है जिसे 'द इण्डियन रिव्यू' के संपादक जी0 एन0 नतेशन ने अनेक गणमान्य व्यक्तियों के आलेखों और भाषणों के संकलन के रूप में प्रकाशित किया था। जिसमें कहा गया था कि पुरानी व्यवस्था समाप्त हो रही है, नई व्यवस्था शुरू हो रही है।

20वीं सदी में दलित जाति का जागरण तब प्रारंभ हुआ जब पूरे विश्व में समानता बंधुता तथा स्वतंत्रता हेतु आंदोलन जोर पकड़ने लगा था। उस समय भारत में भी राजनीतिक सामाजिक जागृति आनी शुरू हुई। जिसमें सामाजिक जागरण के अन्तर्गत अलग-अलग जाति संगठन बनने शुरू हुए। कुछ पत्र-पत्रिकाएं भी निकलनी शुरू हुई। कहीं-कहीं जनेऊ आंदोलन भी चला। दलित वर्ग में शिक्षा का प्रसार करने का प्रयास किया जाने लगा जिसमें कई दलित नेता जैसे- ज्योतिबा फूले, टी0के0 माधवन, जस्टिस रानाडे, पेरियार, धोधा, केशव कर्वे इस काल में दलित वर्ग में जागृति लाने के प्रयास में लग गए। इन लोगों ने शिक्षा पर बल दिया तथा मन्दिर प्रवेश आंदोलन के साथ-साथ कुँओ तथा तालाब के पानी पीने के प्रश्न पर आंदोलन करना शुरू किया।

इन गतिविधियों से दलित जातियों में आत्मसम्मान की भावना का संचार होना शुरू हुआ था। ये अपने समुदाय में प्रचलित कुरीतियों और बुराईयों के प्रति भी सजग होने लगे। उनमें सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष की भावना पैदा हुई। इसी समय सरकार ने यह ऐलान किया कि सभी सार्वजनिक सुविधाएं और सार्वजनिक संस्थाएं अस्पृश्यों समेत सभी के लिए खुली है। औरों के साथ-साथ ब्रिटिश भारत का कानून अस्पृश्यों को भी कुछ अधिकार दिए, जैसे-दलित

***इतिहास विभाग, बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर**

या अस्पृश्य जैसा चाहे वैसा कपड़ा या गहना पहने। इनमें सार्वजनिक सुविधाओं और संस्थाओं के उपयोग के अधिकार भी जोड़ दिए गए, जैसे कुँओ, स्कूलों, बसों, ट्रामो, रेलगाड़ियों, सरकारी कार्यालयों, आदलतों, डिस्पेंशनियों आदि के उपयोग में अब कोई संशय नहीं रह गया था। परंतु हिन्दुओं के विरोध के कारण अस्पृश्य इसका उपयोग नहीं कर पा रहे थे। अत: इस स्थिति का सामना करने के लिए अस्पृश्यों ने तरीकों को बदलने का फैसला किया याचिकाओं, प्रतिरोधों, छोटे आंदोलनों की नीति बदले नहीं तथा सीधी कार्यवाही पर बल दिया। इसमें कुछ घटना देख सकते है, जैसे-

सड़क इस्तेमाल पर :-1924 में द्रावनकोर स्टेट के अस्पृश्यों का विद्रोह यह बायकोम मन्दिर के इर्द-गिर्द बनी सड़कों के इस्तेमाल के बारे में था। ये सार्वजनिक सड़के थी हर कोई उनका इस्तेमाल कर सकता था उनका रख-रखाव स्टेट करती थी। चूकी वह मन्दिर के निकट था अत: अस्पृश्यों को उनके नजदीक चलने की अनुमति नहीं थी। अंत: यहाँ सत्याग्रह किया गया। फलस्वरूप मन्दिर के आंगन को चौड़ा किया गया, सड़क को पुन: इस प्रकार बनाया गया कि उसका इस्तेमाल अस्पृश्य भी करे, तो भी मंदिर को अपवित्र करने वाले को फासले पर ही रखा जा सके।

सार्वजनिक स्थल से पानी लेने के अधिकार पर-इसमें सबसे प्रसि डॉ0 भीमराव अम्बेडकर द्वारा चलाया गया चवदार तालाब आंदोलन था। चावदार तालाब में वर्षा तथा कुछ प्राकृतिक स्रोत से पानी आता था। जमीन तालाब के चारों ओर सड़क थी। सड़क से परे स्पृश्यों के अपने निजी मकान थे। 1869 में जब सरकार के महार नगर के लिए नगरपालिका की स्थापना की तब से सभी को इस तालाब के पानी का उपयोग करने का आदेश दिया गया। अत: इसे सार्वजनिक तालाब माना गया। अत: बाहर से आने वाला कोई भी व्यक्ति इसमें से पानी ले सकता था सिवाय अस्पृश्य वर्ग के। वो कुछ दूरी पर स्थित गंदे कुँए के सिर्फ पानी पी सकते थे। जब 1923 में बम्बई विधान परिषद् ने इस आंशय का संकल्प पारित किया कि अस्पृश्य वर्गो को छूट दी जाए कि वे उन सभी सार्वजनिक जलाशयों कुँओं, धर्मशालाओं का इस्तेमाल कर सकते हैं, जिनका निर्माण और रख-रखाव सार्वजनिक निधि से किया जाता है।

इसके उपरांत 1927 मार्च में कोलाबा में अस्पृश्यों ने सर्वप्रथम सम्मेलन का आयोजन किया कि जिसमें 2500 से अधिक लोगों ने भाग लिया जिसकी डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर ने अस्पृश्यता की इस सम्मेलन में लोगों ने चावदार तालाब का इस्तेमाल का हक प्राप्त करने हेतु आंदोलन का प्रण लिया। इसी के साथ इन्होंने प्रण लिया कि वे अपनी गंदी तथा बुरे आदतों को त्याग देंगें और मानवता की ओर कदम बढ़ाएगे। अगले दिन 20 मार्च 1927 को 2500 अस्पृश्य लोगों के जत्थे ने मुख्य सड़क पर जूलूस निकाला, जो अत्यंत अभूतपूर्व था। चार-चार की कतार से जुलूस चलकर महार के चावदार तालाब के पास पहुँचा पहली बार अस्पृश्यों ने यहाँ का पानी पीया कुछ देर के लिए स्पृश्य यह देखकर आवाक रह गए। परंतु जल्दी ही पागलपन के साथ

टूट पड़े जी भरकर उनपर जुल्म ढ़ाए, जिन्होंने पानी को भ्रष्ट करने का दुस्साहस किया था। दूसरी तरफ दलित इस बात पर तुले थे कि वे न केवल अपने अधिकार के इस्तेमाल से ही संतुष्ट हो जाएंगे, बल्कि देखेंगे कि वह अच्छी तरह से स्थापित भी हो जाए। अत: अस्पृश्यों का एक दूसरा सम्मेलन बुलाया गया, अस्पृश्य को बताया गया कि वे सत्याग्रह के लिए पूरी तरह तैयार होकर आए।

जब हिन्दुओं को इसका पता चला तो उन्होंने कोलाबा के जिला मजिस्ट्रेट से आवेदन किया कि वह दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन आदेश जारी कर दे ताकि अस्पृश्य इस तालाब पर जाकर उसके जल को अपवित्र ना कर सके। जिला मजिस्ट्रेट ने मना कर दिया और कहा कि यह तालाब एक सार्वजनिक तालाब है। यह सभी नागरिकों के लिए खुला है। वह कानून के अनुसार अस्पृश्यों को वहाँ से पानी लेने से नहीं रोक सकते। मजिस्ट्रेट ने उसे सलाह दी कि वे अदालत में जाए और अपने एकमात्र उपभोक्ता होने के अधिकार को सिद्ध करें। यह तय कर दिया गया कि यह सम्मेलन 25, 26, 27 दिसम्बर 1927 को होगा। तीथियां नजदीक आती गई और उन्होंने हिन्दुओं से सुना कि दलित नितांत गंभीर थे साथ ही उन्हें यह भी पता था कि जिला मजिस्ट्रेट उनकी सहायता करने से मना कर दिया है। अत: उनके पास केवल एक ही उपाए रह गया था कि वे अपने इस अधिकार को कानून द्वारा सिद्ध करें कि सार्वजनिक तालाब से दलित पानी नहीं ले सकते। तद्नुसार विभिन्न जातियों के नौ हिन्दूवादी संगठनों ने मिलकर 12 दिसम्बर, 1927 को दावा संख्या 405 दायर किया। हिन्दुओं के प्रतिनिधियों ने यह दावा महाड़ के उपन्यायधीश की अदालत में दायर किया। अस्पृश्यों के प्रतिनिधि के रूप में डॉ० अम्बेडकर तथा चार अन्य लोग प्रतिवादी बने। दावे का उद्देश्य था कि अदालत से यह आदेश प्राप्त किया जाए कि उक्त चावदार तालाब केवल स्पृश्य वर्गो की निजी सम्पत्ति है, इसमें अस्पृश्यों को कोई भी अधिकार नहीं है कि वे उस तालाब में जाकर पानी ले। इस बारे में भी स्थायी आदेश दिया जाए कि इनमें से कोई भी कार्य प्रतिवादी नहीं कर सकते। जिस दिन दावा दायर किया गया, उस दिन वादियों ने अदालत में आवेदन किया कि प्रतिवादियों के खिलाफ अस्थाई आदेश दिया जाए, ताकि वो मुकदमें के फैसले तक तालाब से पानी न ले सके। न्यायधीश ने यह मानकर कि यह एक उपयुक्त केस है 14 दिसम्बर 1927 को यह अस्थायी निषेधाज्ञा बम्बई भेजी गई और डॉ0 अम्बेडकर को सम्मेलन होने से दो तीन दिन पहले तामिल की गई। सलाह के लिए कोई समय नहीं था। सम्मेलन को स्थगित भी नहीं किया जा सकता था। अत: मामला सम्मेलन पर छोड़ दिया गया।

सम्मेलन बुलाने का खास उद्देश्य था कि तालाब से पानी लेने के जिस अधिकार को पिछली बार हिन्दुओं ने चुनौती दी, उसे स्थापित किया जाए। जिला मजिस्ट्रेट ने मार्ग को खुला रखा था। लेकिन अब तो न्यायाधीश ने ऐसी कार्यवाही पर रोक का आदेश जारी कर रखा था। जब सम्मेलन की बैठक हुई तो उसके विचारार्थ

सबसे पहला सवाल यह था कि अदालत द्वारा जारी की गई निषेधाज्ञा को भंग करके तालाब पर प्रवेश किया जाए या नहीं। पहले तो जिला मजिस्ट्रेट अस्पृश्यों के प्रति सहानुभूति रखता था। परन्तु अब उसने एक भिन्न रवैया अपनाया। सम्मेलन को जब स्वयं आकार मजिस्ट्रेट ने सम्बोधित किया तो उसने अपने दृष्टिकोण को पूर्णत: स्पष्ट कर दिया। उसने कहा कि यदि दिवानी अदालत ने निषेधाज्ञा जारी न की होती तो वह सवर्ण हिन्दुओं की उपेक्षा करके तालाब पर आने के अस्पृश्यों के प्रयास में उनकी सहायता करता लेकिन चूंकी उप न्यायधीश ने अपना आदेश जारी कर दिया था, इसलिए उसकी स्थिति भिन्न हो गई है। वह अस्पृश्यों को तालाब में जाने की अनुमति नहीं दे सकता, क्योंकि ऐसा कार्य का परोक्ष अर्थ होगा कि बिना किसी दण्ड के सम्राट के न्यायालय के आदेश को भंग करने में उन्हें सहायता दी जाए। अत: उसे लगा कि उसे बाध्य होकर अस्पृश्यों पर रोक लगाने का आदेश जारी करना पड़ेगा, यदि वह निषेधाज्ञा के होते हुए तालाब पर जाने का आग्रह करे। कारण यह नहीं था कि वह हिन्दुओं का पक्ष लेना चाहता था, बल्कि यह था कि वह दिवानी अदालत की गरिमा के रक्षा के लिए बाध्य था और उसे देखना था कि उसके आदेश का पालन हो। सम्मेलन में कलेक्टर के कथन पर और हिन्दुओं की उस प्रतिक्रिया पर भी विचार किया गया जो अदालत से प्राप्त आदेश का उल्लंघन करके तालाब पर जाने के अस्पृश्यों के प्रयास के प्रति हिन्दुओं की होती। अत: सम्मेलन इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि उनकी बेहतरी और सुरक्षा इसी में होगी कि कानून का पालन किया जाए और देखा जाए कि अधिकार प्राप्त करने में वह कहाँ तक मददगार सिद्ध हो सकता है। अत: निश्चय किया गया कि मुकदमें का अंतिम फैसला होने तक न्यायाधीश के आदेश की सविनय अवज्ञा को स्थगित कर दिया जाए।

सविनय अवज्ञा की कभी नौबत ही नहीं आई, क्योंकि मुकदमें में अस्पृश्यों की जीत और हिन्दुओं की हार हुई। जिन कारणों से अस्पृश्य ने कानून का पालन किया और सविनय अवज्ञा को स्थगित किया, उसमें से एक प्रमुख कारण यह था कि वे इस प्रश्न पर अदालत का निर्णय चाहते थे, कि क्या अदालत अस्पृश्यता की प्रथा वैध ठहरा सकती है? कानून का नियम है कि जिस प्रथा को वैध ठहराना हो वह अति प्राचीन होनी चाहिए, उसे निश्चित होना ही चाहिए, उसे ऐसा होना ही चाहिए, कि वह नैतिकता अथवा लोक नीति के प्रतिकूल न हो। अस्पृश्यों का दृष्टिकोण है कि यह ऐसी प्रथा है, जो नैतिकता और लोक नीति के प्रतिकूल है। लेकिन सार्थकता तभी है, जब कोई न्यायधिकरण उसके बारे में ऐसी घोषणा करें। अस्पृश्यता के प्रथा को अस्पृश्यों के संघर्ष में अति महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। क्योंकि नागरिकता के मामले में अस्पृश्यता को लाना अवैध दिख पड़ेगा। चावदार तालाब विवाद में अस्पृश्यों की जीत कोई मामूली जीत नहीं थी। लेकिन एक प्रकार से यह निराशाजनक थी, क्योंकि बम्बई उच्च न्यायालय ने इस प्रश्न का निर्णय नहीं किया कि अस्पृश्यता की प्रथा वैध है या नहीं। उसने मुकदमें का फैसला हिन्दुओं के खिलाफ इस आधार पर दिया कि हिन्दू यह

सिद्ध नहीं कर सके कि तालाब के मामले में उन्होंने जिस प्रथा का हवाला दिया था, वह अति प्राचीन थी। उसकी राय थी कि स्वयं प्रथा को सिद्ध नहीं किया जा सकता। तालाब अस्पृश्यों के लिए खोल दिया गया। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि दलितों ने अपना उद्देश्य प्राप्त कर लिया। मुख्य मुद्दा यह था कि अस्पृश्यकता की प्रथा वैध प्रथा थी या नहीं। दुर्भाग्य से उच्च न्यायालय ने उस प्रश्न पर निर्णय नहीं दिया। अत: अस्पृश्यों को अपना संघर्ष जारी रखना पड़ा। क्योंकि इस आंदोलन के पीछे दलित के प्रति दुराब प्रथा को खत्म करना था।

वैसे तो सरकार ने आदेश द्वारा पूरे भारत भर में तालाब और कुँओं को दलितों के लिए खोल दिए थे, परंतु कट्टरपंथी हिन्दुओं के कारण दलितों को उसके बावजूद इन स्थलों से पानी नहीं लेने दिया जाता था। परंतु इस व्यापक आंदोलन के उपरांत पूर भारत भर में दलितों ने हिन्दुओं की अवज्ञा करना शुरू कर दिया तथा पानी पीने का प्रयास किया। हिन्दू वर्ग इसे पुर जोर शक्ति द्वारा रोकने का प्रयास करते रहे। जैसे एक घटना 'प्रताप' में छपी की एक चमार को पानी पीने के आरोप में मारा गया। उच्च वर्ग की महिलाएं भी इस मारपीट में तथा दलितों को प्रताड़ित करने में मर्दो का पूरा-पूरा साथ देती। 1932 में पुल बजुआ में रामलाल नामक अस्पृश्य को पानी पीने हेतु ठुकाई की गई। मेधो द्वारा कुंए का पानी पीने पर डंडे से पीटा गया और उन्हें मजबूर किया गया कि वे हिन्दुओं की बनाए परम्परा को उल्लंघन ना करे परंतु ब्रिटिश सरकार इन दलितों के हक के पक्ष में थी। अत: धीरे-धीरे घटनाओं में कमी आनी प्रारंभ हुई। इस प्रकार यह पानी पीने के लिए चलाया गया आंदोलन दलितों को संगठित करने में सफल रहा तथा दलित जागरूक होने लगे।

मंदिर प्रवेश सत्याग्रह-सीधी कार्यवाही के अंतर्गत डॉ० भीमराव अम्बेडकर द्वारा चलाया गया दूसरा महत्वपूर्ण आंदोलन मन्दिर प्रवेश सत्याग्रह था जिसके लिए उन्होंने नासिक के कालाराम मंदिर को चुना। जिसका लक्ष्य विभिन्न प्रयोजनों की प्राप्ति थी, जैसे हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को बारूद लगाकर समूल नष्ट करना इसके लिए 1930 में उन्होंने 5000 पुरूष 500 महिलाओं के साथ आंदोलन की अगुवाई की तथा दादा साहेब गायकबाड़ सहस्त्रबुद्धे देवराव नाइक, डी. पी. प्रधान, बाबा साहब खर्रे, स्वामी आनन्द आदि ने भी उनका साथ दिया। उन्होंने एक किलो मीटर लम्बा जुलूस निकाला उस समय मन्दिर के फाटक बंद कर दिए गए। सवर्ण हिन्दुओं ने उनके ऊपर सड़े अण्डे, टमाटर, पुराने जुते फेंके। फिर भी उक्त सत्याग्रह शांतिपूर्ण था। चूंकी मंदिर का फाटक बंद था। इसलिए लोग गोदावरी नदी में जाते और घाट पर स्नान के बाद मन्दिर के बाहर चले जाते। परंतु गोदावरी में नहाकर नदी को अशुद्ध करने के कारण उन्हें मारा पीटा जाता। महीनों संघर्ष के बाद स्वर्ण और दलित हिन्दुओं में समझौता हुआ जिसके द्वारा रामनवमी को दलित और सवर्ण दोनों मिलकर रथ खिचेंगे। पहले इस मूर्ति के रथ को हजारों शूद्र मराठा, कोली, कुर्मी आदि जातियों के लोग खींचते थे। परंतु

अस्पृश्य को मनाही थी क्योंकि अछूत के छूने से इस विशाल रथ को भी अछूत बन जाने का भय था।

परंतु जैसे ही रामनवमी आई, व्यवस्थापकों और पुजारियों के इशारे पर हिन्दू रथ की एक ही रस्सी को खींचने के लिए तैयार खड़े हो गए। चारो ओर दर्शनार्थियों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। अन्य तमाशाई भी इक्ठ्ठे हो रहे थे। भीड़ हर क्षण बढ़ती जा रही थी। डॉ० अम्बेडकर स्वयं इसका नेतृत्व कर रहे थे। परंतु परंपराओं मनोवृति के कारण एक ओर से संधि को भंग करके, एक ही रस्सी से रथ को खींचकर भागने लगे। दलित इस आपाधापी को समझ ही नहीं पाए इसी बीच बाबासाहेब तथा उनके अनुयायियों पर लोग चारो ओर से पत्थर बरसाने लगे। इस बंवडर को देखकर दादासाहेब भाऊराव गायकवाड़ ने बाबासाहेब से प्रार्थना की कि वे वहाँ से सुरक्षित स्थान पर चले जाए। उनका जीवन खतरे में है। परंतु डॉ० बाबा साहेब डरकर नहीं भागे। अत: उनके अनुयायी चारो ओर से उन्हें घेर कर उनकी जान बचाई। इसी बीच पुलिस आई ओर इन लोगों के ऊपर ही लाठीचार्ज कर दिया। परंतु वो लोग किसी तरह शान्ति से निकल गए। परंतु हिंसा नहीं होने दिया। इस घटना के बाद कपाट बंद कर दिया गया तथा यह आंदोलन पूर्णत: सफल नहीं रहा। परंतु इस घटना में यह बात सिद्ध हो गई कि अस्पृश्य हिन्दू नहीं है ना हि हिन्दू धर्म इनका है और ना ही हिन्दू इन अछूतों का शुभचिंतक है और ना ही भलाई चाहने वाला। वह केवल शोषक है। गाँधी को जब इस आंदोलन के बारे में बताया गया तो उन्होंने कहा कि यह आंदोलन गलत है, आंदोलन तो विदेशियों के विरूद्ध होता है।

संदर्भ-सूची:-

1. बाबा साहेब डॉ० अम्बेडकर; सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड 10(अस्पृश्य का विद्रोह, गांधी और उनका अनशन, पूना पैक्ट) डॉ० अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, आठवां संस्करण-2014, पृ० 153
2. विजय कुमार पुजारी; डॉ० अम्बेडकर : जीवन-दर्शन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ० 59
3. प्रेस इन्फोरमेशन ब्यूरो, 20 मार्च 2003
4. डॉ० बाबा साहेब अम्बेडकर; महाराष्ट्र नव निर्माण सेवा संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका, अभिगमन, 10 मई, 2011
5. विजय कुमार पुजारी, पूर्वोद्धृत, पृ० 60-61
6. बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर; सम्पूर्ण वाङ्मय खंड-10 पूर्वोद्धृत, पृ० 158
7. राम चन्द्र क्षीरसागर; भारत में दलित आन्दोलन एवं उसके नेतागण, एम.बी. पब्लिकेशन, प्रा. लि. नई दिल्ली, 1994, पृ० 1213
8. के. एन. जाघव; डॉ0 अम्बेडकर और उनके आन्दोलन का महत्व, पोपुलर प्रकाशन, 1996, पृ० 93
9. शंकरानन्द शास्त्री, युगपुरुष बाबा साहेब डॉ० भीमराव अंबेडकर : जीवन संघर्ष एवं राष्ट्रसेवा, सिद्धार्थ बुक्स, दिल्ली, 2009 पृ० 78
10. धनंजय कीर; डॉ. अम्बेडकर लाइफ एण्ड मिशन, पोपुल प्रकाशन, बाम्बे, 1990, पृ० 136-40